बी०ए० पार्ट III हिन्दी प्रतिष्ठा

गोस्वामी जी की काव्य दृष्टि -

डॉ॰ सतीश चन्द्र पाठक, हिन्दी विभाग

मान्यता है कि समस्त काव्य गुणों से युक्त अत्यन्त अनूठी कविता का निर्माण किया गया हो किन्तु उसमें जीवन के परम सत्य, जीवन के आत्मिक सत्य को स्थान नहीं दिया गया हो तो वह रचना चाहे उच्च कोटि के प्रसिद्ध एवं यशस्वी कवि की ही क्यों न हो वह समस्त आभूषणों से भूषित निर्वस्त्र स्त्री के समान अशोभनीय है। कविता जीवन के राम रूपी मूलतत्व, परम चेतना और रामरूपी दार्शनिक एवं आदर्श जीवन चर्या के बिना व्यर्थ एवं उपहासनीय है।

'भनिति बिचित्र सुकबि कृत जोऊ। रामनाम बिनु सोह न सोऊ॥
बिधुबदनी सब भाँति सँवारी। सोहन बसन बिना बर नारी॥'

~~यहाँ नहीं~~ आज समाज में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की बड़ी चर्चा है। विद्वानों एवं नेताओं का एक वर्ग इसका प्रबल समर्थक है। अभिव्यक्ति एवं व्यक्तिस्वातंत्र्य के नाम पर समाज में अनर्थ एवं व्यर्थ का साहित्य परोसा जा रहा है। कला के नाम पर ऐसे अश्लील एवं घृणास्पद साहित्य का प्रकाशन हो रहा है जिसे किसी भी दृष्टि से उचित नहीं कहा जा सकता। मकबूल फिदा हुसैन की हिन्दू देवियों की नग्न आकृतियाँ इसलिए प्रशंसनीय नहीं हैं कि वे एक उच्च कोटि के कलाकार द्वारा आरेखित हैं वरन गोस्वामी जी का कथन - 'भनिति बिचित्र सुकबि कृत जोऊ। रामनाम बिनु सोह न सोऊ॥' उन पर पूरी तरह प्रासंगिक है अतः निन्दनीय है। यदि गोस्वामी जी की उपर्युक्त पंक्तियों की व्याख्या का अनुगमन करें तो आज के कला एवं साहित्यिक परिदृश्य पर पूर्णतः लागू होती दिखती हैं। आज वर नारियाँ - सुन्दर एवं अपने समय की सिद्ध प्रसिद्ध नारियाँ - ~~सब भाँति सकल~~ समस्त अलंकारों से सज्जित होकर लगभग निर्वस्त्र होकर समाज में अशोभनीय एवं विकृत सौन्दर्य का प्रचार कर रही हैं। वैसे ही साहित्य में नग्नता आज विमर्श का विषय बना हुआ है। गोस्वामी जी ने अपनी स्पष्ट एवं आदर्श मान्यताओं के आधार पर साहित्य एवं कला की एक सीमा को स्वीकार किया है और उनका आग्रह है कि इसे ~~सार्व~~ सार्वजनीन व समग्र कालों में स्वीकार किया जाए।

गोस्वामी जी ने काव्य के प्रतिपाद्य विषय और उसके स्वरूप पर भी प्रकाश डाला है। कविता में विचित्रता एवं चमत्कार पैदा करने के लिए गूढ़ोक्तियों के प्रयोग एवं जमीन-आसमान की कुलाबों को एक करने के चक्कर में कविता न केवल समाप्त हो जाती है वरन उसे विद्वत्समाज में आदर भी नहीं मिल पाता। ऐसा साहित्य न तो समाजोपयोगी है न दीर्घजीवी। ऐसे क्षणजीवी साहित्य से समाज का भला नहीं होता - "सरल कबित कीरति बिमल सोइ आदरहिं सुजान।" जो कविता सरल हो और उसका प्रतिपाद्य निर्मल चरित है, विद्वज्जन उसी का आदर करते हैं अर्थात् ऐसे ही सरल काव्य एवं निर्मल चरित्रों की स्थापना काव्य को दीर्घजीवी बनाती है।

उनका स्पष्ट अभिमत है कि जिस काव्य को विद्वानों की प्रशंसा और आदर नहीं मिल पाता वैसे कवि या काव्यकर्ता का श्रम व्यर्थ हो जाता है। अतः कविता में सरलता के साथ श्रेष्ठ एवं उच्चचरित्र का अभिज्ञान अनिवार्य है —

जो प्रबंध बुध नहिं आदरहीं। सो श्रम बादि बालकवि करहीं।।

आपेक्षित कला - कला के लिए या कला जीवन के लिए - विषय पर खूब चर्चा हो रही है, पाश्चात्य विचारधारा से प्रभावित आधुनिक विद्वानों का वर्ग यह स्वीकार करता है कि कला में उपयोगितावाद को घुसेड़ना किसी भी दृष्टि से उचित नहीं है कला तो कला के लिए होती है इसका कोई दूसरा स्वरूप हो ही नहीं सकता। जबकि विद्वानों का दूसरा वर्ग इस सिद्धान्त को पूर्णतः अस्वीकार कर 'कला जीवन के लिए' के सिद्धान्त को स्वीकार करता है। उनकी मान्यता है कि सृष्टि की हर वस्तु मानव जीवन के लिए है फिर कला क्यों नहीं। कोई भी कला जीवन से कटकर नहीं रह सकती कला जीवन को सुन्दर और श्रेष्ठ बनाने का एक उपकरण है अतः 'कला जीवन के लिए' सिद्धान्त को किसी भी दृष्टि से अस्वीकार नहीं किया जा सकता। गोस्वामीजी ने अपने मानस में इस पर विचार कर छोटी किन्तु बड़ी सटीक टिप्पणी की है —

कीरति, भनिति, भूति भल सोई। सुरसरि सम सब कहँ हित होई।।

कीर्ति, कविता एवं धन या सम्पत्ति वही अच्छी है जो गंगा के समान सबका हित करे इतने सरल शब्दों में गोस्वामीजी ने 'अमित अरथ' भर दिये हैं जैसे गंगा अनन्त कालों से इस सृष्टि का कल्याण कर रही है वैसे ही कविता भी ऐसी होनी चाहिए जो लोगों का हित करती रहे — 'सहितस्य भाव साहित्यम्' इस परिभाषा की कितनी अच्छी संगति यहाँ बैठती है। गंगा नाना रूपों में हमारा उपकार करती है। स्नान, मज्जन, पान, लौकिक एवं पारलौकिक — समस्त रूपों में गंगा हमारा हित साधन करती है। यदि साहित्य गंगा के समान लोकहितकारी हो तो उसे श्रेष्ठ साहित्य में परिगणित किया जा सकता है अन्यथा वह सामयिक साहित्य बनकर कालान्तर में समाप्त हो जाता है। अविरलता, स्वच्छता, पवित्रता और उसकी सहज उपलब्धता — जैसे गुण यदि काव्य में समाहित हो जाएँ तो ऐसा काव्य कालजयी एवं लोकोपकारक हो जाए। गंगा से उपमा देकर गोस्वामीजी ने

काव्य की उत्कृष्टता की श्रेष्ठ व्याख्या प्रस्तुत करती है। कला जीवन के लिए, समाज के लिए, मानवीय कल्याण के लिए होती है यह भी स्पष्ट कर दिया है। कला केवल मानसिक व्यायाम नहीं है वह सृष्टि के कल्याण का उपकरण है इसे नहीं भूलना चाहिए।

कभी-कभी मैं सोचता हूँ कि गोस्वामी जी का मानसिक फलक कितना विराट था! उनमें समस्त आदर्शों के लिए अनुकूल फलक है। वे विराट चेतना के संवाहक थे। उनमें अनन्त ज्ञान, अनन्त विद्याएं, अनन्त सौन्दर्य एवं शील की अनन्त गहराई है। ऐसा विराट चेतना से ही मानव जैसा रत्न पैदा हो सकता है, फिर भी कहीं कोई अहंकार नहीं अपने ज्ञान का आडंबर नहीं, बल्कि इसके विपरीत उनमें अनन्त विनम्रता है, अनन्त मानमर्यादा है। इतना सब लिख देने के बाद भी गोस्वामी जी ही हैं जो लिख सकते हैं-

कवि न होउँ नहिं बचन प्रबीनू। सकल कला सब बिद्या हीनू॥ धन्य हो महाकवि! मैं अपनी वाणी में तो नहीं आपकी ही पंक्ति से आपकी अभ्यर्थना करता हूँ -

सीय राममय सब जग जानी। ~~जोरि प्रनाम~~ करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी॥ ~~नमामि~~!